RECOLLECTION OF MANIPURI DRAMA SO FAR PUBLISHED AND PRODUCE

'रुपक' संस्कृत शब्द है। भरत मुनि ने अपने नाटय-शास्त्र में इस शब्द का प्रयोग किया है। उन्होंने रुपक के दस प्रकार के बारे में बताते हुए हरेक के स्वरुप का विवरण बारिकि से दिया गया है। एक रुपक से दूसरे रुपक के भिन्नता का कारण पात्रों का चयन तथा अंकों के कम या ज्यादा होने से होता है। रुपक साहित्य की वह विधा है जो खेलकर ही प्रस्तुत किया जाता है अर्थात यह साहित्य खेलने के लिए ही लिखा जाता है। इस विधा को आजकल लोग नाटक कहकर भी जाना जाता है।

यह नाटक शब्द अंग्रेजी शब्द 'drama' का अनुवादित रुप दिखाई देता है। 'द्रामा' अंग्रेजी साहित्य की एक प्रमुख विधा है। इसे दो या-तीन अंक में प्रस्तुत किया जाता है। अंग्रेजी साहित्य में 'द्रामा' का बहुत महत्वपुर्ण स्थान है। उसी प्रकार रुपक भारतीय संस्कृति का अमुल्य धरोहर है। दोनों साहित्य में कवि अपने-अपने भावों को वार्तालाप यानि डाइलॉग के माध्यम से प्रस्तुत करते हैं। इसी कारण हमें दोनों को एक-सी मानकर आगे बढ़ना बहुत गलत होगा क्योंकि रुपक पूर्वी संस्कृति का देन है और द्रामा पाश्चात्य संस्कृति का जहाँ द्रामा को एक मनोरंजन का साधन माना जाता है। भारतवर्ष में नाटय तथा रुपक को लोगों को वेद सिखाने का एक जरिया माना जाता है।

द्रामा और रुपक की भिन्नता को समझाते हुए थियेटर निर्देशक तथा स्कॉलर श्री सनख्या इबोतोम्बी ने कहा है कि द्रामा में टकरार यानि क्राइसिस का होना अतिआवश्यक है। छोटी-सी घटना से धीरे-धीरे बड़ा होकर एक विभत्स का रुप तक पहुँचाने की कला को प्लोत कहा जाता है। यही प्लोत द्रामा की आत्मा होती है। बिना प्लोत के द्रामा द्रामा नहीं कहा जाता। दूसरी ओर द्रामा की तरह रुपक में टकरार की कोई आवश्यकता नहीं है। किसी नायक नायिका के जीवन में धटित धटनाओं को बिना काव्य दोष के पंक्तिबद्ध

बनाकर प्रस्तुत किया गया एक सुन्दर रचना को रुपक कहा जाता है। इससे यह पता चलता है कि द्रामा में एन्टागोनिस्ट और प्रोतागोनिस्ट के बीच हुई तकरार, द्रामातिक एकसन को प्रस्तुत करने की वजाय नायक और नायिका दोनों के साथ धटित आदर्शनीय तथा मनमोहक घटनाओ को क्रमश: रखकर ही रुपक बनाया जाता है। परन्तु खृष्ट के उन्नीसवी शताब्दी में युरोप महादेश भर में प्रसिद्ध डेविड गेरिक का पेरिसियान थियेटर का बंगाल पहुँचने के बाद बीसवी शताब्दी की शुरुआत में मणिपुर पहुँचे तो इसमें न रुपक का रुप रहा न द्रामा का। दोनो साहित्य का मिला जुला एक अलग रुप में सामने आ गए। इस नए रुप में एक्ट सिन, द्रोप आदि को महत्व न देकर नायक -नायिका के जीवन में घटित सुख-दुख मिश्रित घटनाओं को क्रमश: प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ-साथ विलन कहकर जाना एक चरित्र का निर्माण कर नायक अथवा नायिका के बीच हुई कनफ्लिक्त को प्लोत बनाकर लिला यानि नाटक लिखने लगे। मणिपुर के ज्यादात्तर लिला इसी प्रकार का है।

किसी जाति के द्रामाटिक लिटरेचर तथा थियेटर का उस जाति के साथ एक अटूट सम्बन्ध रहता है- इस बात से कोई इन्कार नही कर सकते। मणिपुर समाज की दूर्भाग्य यह है कि मणिपुर थियेटर की शुरुआत यानि प्रोसिनियम थियेटर का मणिपुर पहुँचने पर मणिपुरी समाज के साथ कदम से कदम मिलाकर नहीं चल पाए। कारण यह रहा कि परम्परा से प्रचलित नाट्य रुप जैसे रास, गोष्ठ, गौर लिला, उदुखल आदि नाट्य परम्पराओं का गहरा प्रभाव मणिपुर में था। आजकल द्रामा कहकर जाना पहचाना इस अंग्रेजी साहित्य की विधा का प्रचलन मणिपुरी समाज में नहीं था। वीसवीं शताब्दी की शुरुआत में गिरिशचन्द्र घोष, द्विजेन्द्रलाल राय, अपरेशचन्द्र मुखर्जी आदि के पौरानिक और ऐतिहासिक नाटकों नें बंगाली बाबुओं के साथ मिलकर एक मनोरंजन के साधन के रुप में थियेटर ने मणिपुर पहुँचा है। बंगाली नाटकों का अनुवाद कर स्कूल के अध्यापकों तथा थियेटर प्रेमियों ने स्कूल के तथा अपने घर कें आंगनों में प्रस्तुत करने लगे। यही मणिपुरी साहित्य में द्रामा न आने का एक कारण रहा। समयानुसार सामाजिक अवस्थाओं में कई परिवर्तन आना शुरु हो गए जैसे मणिपुर में वृटिश का प्रभाव, अंग्रेजी शिक्षा का आगमन तथा अंग्रजी साहित्य

के साथ भेंट आदि के कारण मणिपुर साहित्य में नया परिर्वतन आने लगा। इस काल के साहित्य में परम्परा से भिन्न अपने कल्पना की नई उड़ान भरने लगे तथा धर्म और रीति-रिवाज के प्रति असंतोष की मंद स्वर मुखरित होने लगी। दुर्भाग्य यह है कि इस युग के लेखकों ने जीवन से संबंधित कई सुन्दर कविता, कहानी, उपन्यास आदि लिखने के बावजूद भी द्रामा नामक विधा पर किसी ने हाथ नहीं अजमाया।

समयानुसार मणिपुर में थियेटर के कई संस्थाएँ जैसे एम. डि.इउ., एयिवान थियेटर, रुपमहल आदि की स्थापना होने पर भी बंगाली नाटकों के अनुबाद, संस्कृत नाटक आदि खेलने के कारण मणिपुरी साहित्य में मणिपुरी मौलिक नाटक आने का संभावना बहुत कम था। बाद में इस अभाव की पूर्ति के लिए कई नाटक सामने आए पर वे समाज के साथ कोई तालमेल नहीं रख पाए। इस युग का मुख्य नाटक माना गया श्री लाइरेन्मयुम इबुङङोहल सिंह का नरसिंह, श्री अराम्बम दरेन्द्रजीत सिंह का 'भाग्यचन्द्र', 'मोइराङ थोइबी', श्री लमाबम कमल सिंह का 'देवजानी', श्री सोरोखाइबम ललित सिंह का 'अरेप्पा मरुप' और 'सति खोङनाङ', श्री हिजम अङाङहल सिंह का 'इबेम्मा और पोक्तबी' आदि लिलाएँ मणिपुर थियेटर में स्कृप्त की अभाव जो थे उसी की पूर्ति का प्रयास है। रुपक तथा द्रामा का पूर्ण ज्ञान न होने का प्रमाण इन स्कृप्तों में मिलना है। श्रीहाओबम गौरदास सिंह का कहना है- 'नरसिंह' में नरसिंह के चरित्र का उजार कर स्वदेश प्रेम और स्वदेश भक्ति का मंत्र बाँटने पर भी लिला के कन्सत्रकसन और चरित्र-चित्रण में कमजोरी पाई जाती है। सेक्सपियर कीं मेकबेथ को आधार बनाकर लिखा गया 'भाग्यचन्द्र' में चरित्र-चित्रण को दुर्बलता 'सेन्टर ऑफ ग्रेभिति' का अभाव आदि कई दोष देखने को मिलता है। खेलै नुङनाङ और लाईश्रर्बा को मेकबेथ और लेडी मेकमेथ के रुप में चित्रित कर उनके त्रेजिक हाइत और त्रेजिक दिम्निति का चरम सिमा न पहुँच पाने का दुर्रावस्था महसुस किया जाता है। 'मोइराङ थोइबी' को शकुन्तला के आभरण में 'मार्चेन्त ऑफ भेनिस' से उद्धार लिया कुछ अलंकरों के साथ प्रस्तुत किया जाता है। सामाजिक नाटक के रुप में लिखा गया 'अरेप्पा मरुप' और 'ईबेम्मा' में भी मानब समाज और मानव जीवन को गहराई से देखकर लोगों के मन मस्तिष्क पर जोड़ देने की क्षमता नहीं रही।

'नरसिंह' सन १९२२ में श्री लाईरिनमयुम इबुङङोहल सिंह द्वारा लिखा गया मणिपुर का पहला नाटक है। कहा जाता है इससे पहले सन १९२० में श्री कैशाम अमुबा सिंह द्वारा 'मणिपुर फोङबा'नामक एक नाटक भी लिखा गया है पर इस लिला का स्कृप्त न मिलने के कारण सन १९२४ में श्री गोविन्दजी के माण्डप में मणिपुर स्टेट पुलिस द्वारा अप्रिल ३ में खेल गया लाईरिनमयुम इबुङङोहल सिंह का नरसिंह ही मणिपुर का पहला नाटक माना गया है। जब वह लो की पढ़ाई कर रहे थे तब उन्होंने यह नाटक लिखा था पर इसकी छपाई तीन साल बाद हुई थी। जब बी.ए.की सिलेबस के लिए पाँच मौलिक ग्रंथ की आवश्यकता हुई तब उन्होंने यह छप्पाई थी।

इस नाटक का आरम्भ संस्कृत नाटक की तरह प्रस्तावना नाम रखकर गौरी नामक शुम्भ निशुम्भ का संहार करने वाली देवी का वंदना द्वारा होता फिर मूल लिला का अंश शुरु होता है। यह लिला रुपक की प्रथम प्रकार नाटक की भांति पाँच अंकों मे विभक्त कर लिखा है फिर उन अंकों को पाश्चात्य नाट्य यानि द्रामा की सिन की तरह दृश्य नाम देकर कई दृश्यों में विभाजित करता है।

प्रथम अंक का पहला दृश्य एक छोटा-सा कमरे में शाम के तीन बजे होता है। नरसिंह लेटे हुए थे। सपने में मणिपुर को आवा के हाथों बहुत प्रतारित होते देख अचानक उनका आँख खोल लेता है। उसे बहुत दुख होता है कि उनके होते हुए मणिपुर प्रजा को बहुत कष्ट पहुँचता है। आप स्वगत कहता है कि- 'पितामह बाब्रुवाहन! पर पितामह पाखङबा! देख नहीं रहे है क्या जो हो रहे है? तैंतीस करोड़ देवता तथा चौदह लोक को पराजित किए गए अर्जुन को भी परपितामह बब्रुवाहन के हाथों परास्त होने पड़ा। उस वीर वंश में जन्मा एक क्षत्रिय होकर तुच्छ विधर्मी अवा का मैतै को अत्याचार कर मणिपुर पर शासन करने पर भी मैंने संसार लिप्त होकर अपने परिवार वालों का मुँह देखते रहना उचित है क्या? नहीं, आज से मैं अपने घर परिवार का मोह छोड़ दूँगा; जब तक मणिपुर का उद्धार नहीं हो जाता, त्यागी बन अपना कर्तव्य पूरा करने की कोशिश करुँगा। तभी अपनी पत्नी पद्मावती रोती हुई आती है। पूछने पर पता चलता है कि आवा नें उनके भतीजे को उनके पास आते वक्त रास्ते में पकड़ किसी चट्टान पर दे मारकर मार डाला है और उनकी माँ का कहीं कोई पता नहीं चला है। तब नरसिंह कहता है तुम्हारी माँ और भतीजे की तरह कई लोगों की जानें आवा ने ले लिया है। जबकि हमने मातृभूमि की उद्धार का ठान लिया है तो अपनों की चिंता करने का समय नहीं है। उसने घरवार संभालने की जिम्मेदारी पद्मावती को सोंप देता है। पद्मावती के मानने पर नरसिंह अपने भाई गम्भीर सिंह के पास चले जाते हैं। उनके चले जाने पर पद्मावती श्रीगोविन्द को निवेदन करती हुई एक गीत गाती है। इसी के साथ पहला दृश्य समाप्त होता है।

द्वितीय दृश्य एक वगीचे में दिखाया जाता है। शाम के समय है गगन में लालिमा छा-जाती है। इस द्वितीय दृश्य में हेमावती स्वगत श्रीगोविन्द को प्रणाम कर अपनी मनोकामना पूर्ण करने की प्रार्थना कर रही थी। तभी चन्द्रहास आकर हैमावती के प्रति उनका प्यार व्यक्त करता है तथा यह जानने की कोशिश करता है कि उनके मनमें क्या है। हेमावती कहती है-हर समय लड़ाई झगड़े की बात सुनते रहने के कारण उनके मनमें प्यार का अंकुर नहीं फुटा इसलिए उसको लेकर उनके मन में कोई गलत धारणा मत पालना। कितनी पानी

डालने पर भी पत्थर कभी पिघलता नहीं। चन्द्रहास के बारम्बार प्रण्न निवेदन करने पर भी हेमा पर कोई परिवर्तन न आता देख उसे क्रोध आ जाता है इसलिए हेमा को जबरदस्ती उठाकर ले जाने की कोशिश करता है। तभी प्रताप आकर चन्द्रहास को रोक लेता है साथ ही उनके पशुत्व-सा व्यवहार के लिए कुछ सुनाता है तो चन्द्रहास भड़क उठता है। वह प्रताप को उसके साथ युद्ध करने को ललकारता है। उसका कहना है कि राजकुमारी हेमावती को प्यार करने वाले दो व्यक्ति नहीं सिर्फ एक ही जीवित रहना होगा। प्रताप उसे दुबारा सोचने को कहता है कि उस वक्त दोनों में से किसी एक का भी खोना मातृभूमि की क्षति है फिर भी वह लड़ाई ही चाहता है तो खोइरेन पाब में मिलने को कहता है। चन्द्रहास शाम को मिलने को कहकर चला जाता है। प्रताप प्रेम के बारे में सोचता रह जाता है। जो प्रेम मनुष्य को स्वर्ग के नन्दन-कानन पहुँचा देता है वही प्रेम लोगों को आसानी से पशु-सा व्यवहार करने को बाध्य भी करता है। इस प्रेम के कारण चन्द्रहास ने पशुता का व्यवहार किया है। प्रताप को समझ में नहीं आता क्या किया जाय । उसके हृदय में राजकुमारी हेमावती का प्रतिबिम्ब जो पड़ता है उसे मिटा भी नहीं पाता। पर वह खुद को सम्भाल लेता है कि अब इन बातों का समय नहीं।

नरसिंह लिला का तृतीय दृश्य में चौरजीत मारजीत दोनों भाइयों को बातचीत करते हुए दिखाया जाता है। सुबह का समय है। मारजीत अपने भ्राता से कहता है कि उनके गलती के कारण आवा ने मणिपुर पर आक्रमण कर राज किया है। आवा के पास बहुत-भारी सेना होने के कारण उनको अकेले हराना उसके बसकी बात नहीं है। इस लिए अपने भाई से आवा को हराने में सहायता चाहता है पर चौरजीत कहता है कि गलती उसकी है जो राजा होने की दंभ और राजा बनने रहने की चाहत ने अपना सब वचन भुला दिया और उसी के चलते यह सब हुआ है। वृद्धावस्था पहुँचने के कारण आवा के साथ भीड़ना असंभव प्रतीत होता है इसलिए गंभीरसिंह के साथ मिलकर आवा को पराजित कर निङथि नदी के पार उनको भगाकर बज्रसिंह नामक उनके तलवार को निङ्थी नदी की धार में धोकर उनका संकल्प पुर्ण करे । इस प्रकार दोनों बातचीत हो रहे थे तब गंभीरसिंह नरसिंह के साथ वहाँ

आ पहुँचता है। मारजीत कहता है कि भ्राता इस लड़ाई में शामिल नहीं हो रहे है, पिताश्री द्वारा स्थापित अनुप्रभु की सेवा कर नवद्धीप धाम में अपना शेष जीवन व्यतित करना चाहता है। भैया हमारे साथ मणिपुर नहीं जा रहे है इसलिए मैं भी जाना नहीं चाहता, भैया को नवद्धीप धाम पहुँचाकर फिर श्रीधाम क्षेत्र जाकर वहाँ वास करुँगा। यह बात सुनकर गंभीरसिंह को बहुत दुख होता है। वह अपने भाई से ऐसा निर्णय न लेने का निवेदन करता है पर दोनों के न मानने पर उसे क्रोध आता है। वह कहता है कि उन दोनों के कारण मणिपुर को कष्ट पहुँचा है इसलिए निवारण के लिए भी उन्हें आगे आना चाहिए। इस बात से मारजीत और गंभीरसिंह के बीच आना-कानी शुरु हो जाता है पर चौरजीत ने उनको किभी तरह संभाल लेता है। बाद में नरसिंह और गंभीरसिंह को मणिपुर उद्धार का भार सोंपकर दोनों चले जाते है। गंभीरसिंह और नरसिंह दोनों को दण्डवत प्रणाम कर रह जाते हैं। उनके चले जाने पर गंभीरसिंह नरसिंह को पुछता है कि आवा से लड़ना उसे डर लगता है कि नहीं । नर कहता है गंभीरसिंह के सेवक नर को बनाते वक्त डर नामक अंश नहीं डाला गया है। यह सुनकर गंभीरसिंह नरसिंह को मणिपुर जाकर वहाँ की स्थिति देख आने को कहता है और नरसिंह अपने भाई से आज्ञा लेकर चला जाता है। गंभीरसिंह यह सोचकर रह जाता है कि श्रीगोविन्द मणिपुर जाना चाहता है इसलिए उनके सहायता के लिए नरसिंह को उनके पास भेजा है।

पहले अंक के चतुर्थ दृश्य में रास्ता दिखाया गया है। रात के आठ बजे का समय है। कुमुद मणिपुर की दूर्दशा के बारे में सोचता हुआ जा रहा था। वह चिङथङखोम्बा महाराज का स्मरण कर कहता है कि उनके राज्यकाल में उत्कर्ष की चरमसीमा को छुता उनका मणिपुर आज अपने ही पुत्रों ने ही नरक पर ढकेला है। इतना ही नहीं वे काछाड़ भागकर वहाँ बस जाने से मैते के दुख र्दद का उन्हें कोई चिंता नहीं रहे। कुमुद को कहीं से पता चलता है कि नरसिंह नामक एक राजकुमार मणिपुर की अवस्था देखने आए है। वह उनसे मिलकर आवा को भगाने में उनका मदद करना चाहता है साथ ही नरसिंह पर आत्म सम्मर्पण करना चाहता है। तभी आवा के कुछ सैनिक उनके तरफ आते देख पागल-सा व्यवहार करने लगता है, सैनिकों ने भी उनको पागल समझकर उन्हें छोड़ देता है और

बेपरवाह होकर बातचीत करने लगता है। उनके बातों से यह पता चलता है कि मैतै औरतों ने आवा द्वारा उनके शरीर को अपवित्र करने से पहले आत्महत्या कर देता है। अगर हो सकता है तो मरने से पहले उन सैनिकों को मार भी डालता है। कुमुद उन औरतों की प्रशंसा करता है जो अपनी सतीत्व की रक्षा हेतु अपना प्राण न्योछावर करता है साथ ही वह श्रीगोविन्द से मणिपुर उद्धार की प्रार्थना करता है । अंत में अपने भाइयो को यद्ध की आह्वान करते हुए कहता है कि रोने से कुछ हासिल नहीं होगा, अपनी जान की परवाह न कर मातृभूमि की दुख हरने की कोशिश करते है।

प्रथम अंक के अंतिम और पाँचवी दृश्य में भी रास्ता ही दिखाया जाता है। राजदरवार के कुछ सैनिक तथा सेवक दर्दभरी गीत गाते हुए आते हैं। वे कहते है कि अपने ही देश के राजदरवार में मैते को शर्मिन्दा करना पड़ रहा है। तभी नरसिंह अपने साथियों के साथ वहाँ आता है। उनके गीत सुनकार इतना दर्दभरी गीत न गाने तथा उनके बारे में थोड़ा सोचने को कहता है। उनके बात सुनकर सेवक अपनी मातृभुमि को संबोधन कर उसे न रोने को कहता है साथ ही उनके प्रताप का व्यारव्यान कर गाते है। उस गीत का कुछ अंग इस प्रकार हैं -

है मणिपुर शिव ने ही बनाया है तुम को
यह संसार भुले नहीं तुम को अब भी
चित्रसेन का यश गुंजता है भारत भर में।
.....
अर्जून का यश खो जाता है यहाँ
बब्रुवाहन महाराज ने किया था भीषण युद्ध
लाए थे राजा भाग्यचन्द्र श्रेठ धर्म यहाँ,
धन्य हुए हम मिलने से कुछ अंश उनके शौर्य का।
ढकने दो काली घटाओं से तेरा मुख
हट जाएगा अति शीघ्र, देखेगा प्रकाशमान
सुन्दर चेहरा स्वर्ग से बढ़ी जन्मभूमि मणिपुर।

गीत खत्म होते ही कुमुद आकर मैतै के हृदय में उत्साह जगाने को कहता है। वह कहता है कि - "अब रोएँगे नही बहुत दिन बीत गए रोते हुए। आर्यवंशज है हम। चलो उठो बन्धु, हम सब मिलकर अपने स्वदेश की मंगल की कामना करे। रोने से काम नहीं होगा, उत्साह से ही कार्य सम्पन्न होता है। इसलिए जगाओ मैतै के हृदय में उत्साह की ज्वाला।" उनकी बात को सुनकर नरसिंह खोमदोन दूवारा उनको बुलाता है। अनजान व्यक्ति के उनको बुलाने पर कुमुद पागल-सा व्यवहार करने लगता है। नरसिंह उनके पागल पन पर संदेह करता है। अपना परिचय देकर दूवारा पुछने पर कुमुद अपना रहस्य खोलता है और नरसिंह का सेवक बन जाता है। तभी आवा का सेनापति अपने सैनिकों के साथ वहाँ आता है। नरसिंह के सेवक और कुमुद उनको मारने की कोशिश करते है पर नरसिंह उन्हें यह कहकर रोक लेता है कि - 'चुप रहो, मुझे सुनना नहीं, यह क्षत्रिय धर्म के विरुद्ध कार्य है।' आवा सेनापति नरसिंह को पहचानने के बाद उन्हें राजा बनाने का प्रलोभन देकर उनके पक्ष में आने का न्योता देता है। नरसिंह उनके उत्तर में कहता है - 'सेनापति! ऐसी बात दूवारा मत कहना। राजसिंहासन को मोह नरसिंह में नहीं है तुम जैसे अत्याचारी से मणिपुर कर उद्धार हेतु यह सब किया है। मणिपुर में मैतै पर इतना अत्यचार उचित है क्या ?'

- नया देश है इसलिए शासन करने हेतु थोड़ा डरा धमकाया होगा । उतना अत्याचार कहाँ ?

- जातियों के बीच लड़ाई झगड़ा, जय-पराजय स्वाभाविक है पर तुम जैसा इतना क्रुर संसार में कहीं नहीं मिलता, मिलेंगे भी नहीं। तुम लोग तो पशु से भी.....

इस तर्क के बाद दोनों के बीच छिना-झपटी झगड़ा हो जाता है।

द्वितीय अंक भी पहले अंक की तरह पाँच दृश्यों में विभाजित कर लिखा जाता है। इसमें गंभीरसिंह का मणिपुर आना, ब्राह्मणों पर भी आवा का अत्याचार, गंभीरसिंह और नरसिंह का मणिपुर पर मिलना तथा आवा के साथ लड़ाई आदि दिखाई जाती है। इस नाटक के शेष अंक में अंग्रेज सरकार ने तिलाइन चोटी पर डेरा डालकर रहे आवा को भगाने कि लिए गंभीरसिंह से मदद माँगते है। गंभीरसिंह और नरसिंह की मदद से तिलाइन पर डेरा डाले आवा को भगाने में सफल हो जाता है। तिलाइन से आवा को भगाने के वाद फिर उन्होंने मणिपुर पर आक्रमण कर आवा को निङथि नदी के पार भगाकर अपने भ्राता चौरजीत का बज्रसिंह नामक तलवार को निङथि नदी की धार में धो लेता है। और वहाँ तक अपना आधिपत्य स्थापित कर लेता है। आवा का राजा अपना पराजय स्वीकार कर लेता है। वह अपने सेनापति से संधि करने को कहता है। संधि के बाद गंभीरसिंह मणिपुर का राजा बनता है और नरसिंह को युवराज तथा सेनापति का भार सोंपकर श्री नवद्वीपचन्द्र की सेवा करने को कहता है-

"..... में तुम्हारा भ्राता आज से 'श्री गोविन्द' की सेवा कर राजधर्म निभाऊँगा और तुम मेरे प्रिय युवराज तथा सेनापति का भार उठाकर 'श्री नवद्वीप चन्द्र' की सेवा करना। अपने संकल्पानुसार 'श्रीश्री गोविन्द' में स्वर्ण थामे नवछत्र अपर्ण कर उनका राज अभिषेक कर एक साधारण भांडारी की भांति मैं उनका सेवा करुँगा। मणिपुर उद्धार में अपने कष्ट, दुख-दर्द की चिन्ता किए बिना सहभागी बने उन लोगों को अपने अपने क्षमता नुसार पद और इनाम देकर सम्मान करने की व्यवस्था करो।"

इसके बाद राजमहल में नरसिंह को ज्यादा महत्व देने की बात को लेकर लोगों में इर्ष्या होने लगा। उन्होंने नरसिंह के खिलाफ षड्यन्त्र करना शुरु कर दिए है। उन्होंने महारानी के कान भर दिए हैं। महारानी कुमुदिनी उनके बहकावे में आ जाती है। उसी वक्त गंभीरसिंह की अकस्मात मृत्यु हो जाती है। मरने से पहले उन्होंने अपने तीन वर्षीय पुत्र चन्द्रकीर्ति को नरसिंह के हाथ सोंप दिया है। अपने भाई की मृत्यु के बाद नरसिंह ने चन्द्रकीतिं को राजा बनाकर शासन की भागदौड़ खुद संभालता है। इससे पदके लालची लोग और असंतुष्ट हो जाते है। उन्होंने तरह-तरह अफवाहें फैलाए। महारानी कुमुदिनी उनकी बातों में आकर नवीन दूवारा नरसिंह को मारने का षडयंत्र करती है। नरसिंह पर प्रहार करते वक्त नवीन का पकड़ा जाना तथा उन्हें मार डालने की खब्बर सुनकर महारानी कुमुदिनी अपने पुत्र चन्द्रकीर्ति को लेकर काछाड़ भाग जाती है। नरसिंह अपने आदमी भेजकर उनको रोकने की कोशिश करता है पर उनसे भेंट नहीं हो पाता। अपने भाभी श्री की इस प्रतिक्रिया पर दुख व्यक्त करते हुए नरसिंह कहता है कि - "अगर नर की इच्छा होती तो इस शिशु के स्थान पर अपने भाई का बध कर राजा बन सकता था। उस वक्त मुझे रोकने वाला कोई नहीं था। समग्र सेना मेरे निर्देशानुसार काम करता था। शक्तिशाली अनुज देवेन्द्र मेरे आज्ञा का पालन करता था। इन सुअवसरों को छोड़ सेनानायक बनता आया हूँ। क्या नर आज इस अबोध असहाय बालक की हत्या कर राजा बनेगा? भीभीश्री अगर यह सब ठीक से सोच-विचार कर देखे तो भागने की कोई आवश्यक्ता नहीं होती। उनको कहीं न मिलने का संदेश भी आया है। मयाङ पहुँच गए तो मिल नहीं पाएँगे। क्या करे, हे गोविन्द! मुझे राजा बनना पड़ेगा?"- तभी लोग आकर उनको राजा का पद स्वीकार करने को कहता है पर नरसिंह अपने अनुज देवेन्द्र को राजा बनाना चाहता था परन्तु देवेन्द्र के न मानने पर नरसिंह को आवश्यक्तानुसार राजा बनना पड़ा । राजगुरु दूवारा उनका राज अभिषेक करने के बाद शांति मंत्र पढ़कर यह लिला समाप्त किया जाता है।

यह लिला संस्कृत के नाटक की भांति पाँच अंकों में लिखा तो है पर इसे नाटक की मुल तत्व नाट्य संधि यानि मुख, प्रतिमुख, गर्भ, निर्वहन आदि के अन्तर्गत रखकर इसकी जांच नहीं किया जा सकता। साथ ही किसी भी काव्य में काव्य दोष न रहने के लिए बनाए गए अंकउपक्षेप जैसे प्रवेशिका, विस्कंभक, चुलिका आदि का कहीं नामोनिशान नहीं। इसी कारण पाठकों को बहुत आसानी से भ्रम पैदा करता है। कहने का तात्पर्य यह है कि इस लिला का मुल चरित्र गंभीरसिंह या नरसिंह का स्थान बदलना यानि पहले दृश्य में मणिपुर तो दूसरे क्षण काछाड़, कभी तिलाइन तो कभी कक्ष में होना लोगों को अजीव महसुस होता है। अगर इसे हम पाश्चात्य दृष्टिकोण से देखे तो भी उचित प्रतीत नहीं होता। सोफोक्लिस का 'आन्टिगोने' बिना एक्त और सिन के कोरस और पात्रों का सामने रखकर लिखा जाता है। ब्रेक्त का 'माडर करेज' बारह सिन के अन्तर्गत लिखा जाता है। अलबर्ट कामु ने उनका 'द जस्त' पाँच एक्ट में तथा 'द पोजेस' को थ्री पार्ट में विभक्त कर फिर एक एक पार्ट को कई सिन में बाँट कर लिखा जाता है।

उपयुक्त बातों से यह सावित होता है कि नरसिंह के लेखक श्री लाइरेनयुम इबुङङोहल सिंह ने यह लिखते वक्त किसी एक फिलोसोफी का अनुसरण नहीं किया है। एक शिक्षित व्यक्ति होने के नाते उन्होंने पाश्चाव्य लिटरेचर तथा भारतीय संस्कृति से जो ज्ञान अजिर्त किए है, 'नरसिंह' उन दोनों संस्कृति का मिला जुला रुप है।

....

Name :- Ms. Sorokhaibam Sushila Devi

Field :- Theatre

Add.:-Keishampat Leimajam Leikai,
Dist. :- Imphal West,(Manipur),Pin-795001
Email:- shilatheatre6@rediffmail.com
Mob :- 9612444998